इकाई 3 राष्ट्रीय आंदोलन

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 पूर्वकालिक राष्ट्रवादी गतिविधियाँ

3.2.1 भारतीयों द्वारा औपनिवेशिक मतभेद का अनुभव

3.2.2 भारतीय प्रतिनिधित्व में वृद्धि की माँग

3.3 अतिवादी राष्ट्रवादी चरण

3.4 गदर और होमरूल आंदोलन

3.4.1 गदर आंदोलन

3.4.2 होमरूल आंदोलन

3.5 गाँधी व असहयोग आंदोलन का पदार्पण

3.5.1 गाँधी और कृषि-वर्ग

3.5.2 रोलट एक्ट के प्रति विरोध

3.5.3 असहयोग आंदोलन

3.6 कृषि-वर्ग, कामगार वर्गों का वामपंथ का उदय

3.6.1 गाँधी-अम्बेडकर विवाद

3.6.2 मार्क्सवाद का आगमन

3.6.3 सम्प्रदायवाद का विकास

3.7 नागरिक अवज्ञा आंदोलन और उसके परिणाम

3.7.1 सायमन आयोग

3.7.2 नागरिक अवज्ञा आंदोलन

3.8 विश्वयुद्ध और 'भारत छोड़ो' आंदोलन

3.9 युद्धोपरांत लहर

3.9.1 आज़ाद हिन्द फौज़ (आई.एन.ए.)

3.10 सांप्रदायिक दंगे, स्वतंत्रता और विभाजन

3.11 सारांश

3.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की विरासत ने भारत में राजनीति को एक नहीं अनेक तरीकों से प्रभावित किया। भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की समझ आपको तत्कालीन भारत की राजनीति को समझने में बेहतर मदद करेगी। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे कि :

- भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में भिन्न-भिन्न वैचारिक पृष्ठभूमि वाले नेताओं की भूमिका समझ सकें;
- कृषि-वर्ग व कामगार वर्ग जैसे विभिन्न वर्गों के योगदान को जान सकें;

- स्वतंत्रताप्राप्ति के पूर्वगामी कुछ विकास-परिणामों, और उसमें राजनीति के योगदान के बीच सुस्थापित रेखा खींच सकें; और
- राष्ट्रीय आंदोलन के अधूरे काम का विश्लेषण कर सकें।

3.1 प्रस्तावना

विश्व इतिहास में दो महत्त्वपूर्ण जन-आंदोलन थे – 'भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन' और 1949 की 'चीनी क्रांति', जिन्होंने लाखों लोगों का भाग्य ही बदल दिया। पहले ने लाखों भारतीयों की स्वतंत्रता हेतु इच्छा को सुव्यक्त किया, और उपनिवेशित एशिया व अफ्रीका में आंदोलनों को प्रेरित किया। यह भारतीय आंदोलन अनेक चरणों से गुज़रा।

3.2 पूर्वकालिक राष्ट्रवादी गतिविधियाँ

जैसा कि आप इकाई 1 व 2 में पढ़ चुके हैं, ब्रिटिशों ने भारतीयों का अनेकविध शोषण किया और विभिन्न प्रवर्गों ने इसका नानाविध तरीकों से प्रत्युत्तर दिया।

3.2.1 भारतीयों द्वारा औपनिवेशिक मतभेद का अनुभव

ब्रिटिश शासन के शोषणवादी और भेदभावपूर्ण लक्षण का अनुभव धीरे-धीरे हुआ। दादाभाई नौरोजी, बदरुद्दीन तैयबजी, के०टी० तेलंग, गोपालकृष्ण गोखले, आर०सी० दत्त व एम०जी० रानाडे ने लेखों द्वारा लोगों में बढ़ती गरीबी व बेरोज़गारी के लिए जिम्मेदारी स्पष्ट रूप से औपनिवेशिक राज्य पर डाली। उन्होंने देश के प्रशासन के साथ भारतीयों को न सम्मिलित के लिए भी औपनिवेशिक अधिकारियों की आलोचना की। जब सुरेन्द्रनाथ बनर्जी (1848-1925) को एक सारहीन आधार पर असैनिक सेवाओं में जाने हेतु अयोग्य करार दे दिया गया, उन्होंने देश भर में भ्रमण किया और औपनिवेशिक शासन के भेदभावपूर्ण स्वभाव के विषय में देशवासियों को शिक्षित किया। 1883 में, इलबर्ट विधेयक ने एक पीठासीन भारतीय न्यायाधीश को किसी यूरोपियन के न्याय-विचार मुकदमे हेतु शक्ति प्रदान करने का प्रयास किया। इस विधेयक, जिसे वे मानते थे कि प्रजातीय पदानुक्रम को निष्ठाहीन बना रहा है, के खिलाफ़ ब्रिटिश व यूरोपीय जनता के प्रबल व संगठित विरोध-प्रदर्शनों ने राज्य के अनिवार्यत: प्रजातीय चरित्र के प्रति भारतीय के एक बड़े प्रवर्ग की आँखें खोली दीं। इसने उन्हें उनकी स्थिति के प्रति सचेत कर दिया कि वे आम प्रजा ही हैं, न कि 'क्वीन' की उद्घोषणा (1858) में प्रतिज्ञ समानता के हकदार, अथवा उसके जिसकी उन्होंने शिक्षा के माध्यम से अर्जित कर लेने की आशा की थी।

3.2.2 भारतीय प्रतिनिधित्व में वृद्धि की माँग

इस अनुभव के परिणामस्वरूप, मद्रास नेटिव एसोसिएशन, पूना सार्वजनिक सभा (1870), बंगाल में इण्डियन एसोसिएशन (1977), तथा मद्रास महाजन सभा (1884) बनाई गईं। उन्होंने माँग की कि लेजिस्लेटिव तथा वॉयसराय की एक्ज़ीक्यूटिव कौंसिलों में भारतीय प्रतिनिधित्व बढ़ाया जाए, और सिविल सर्विस परीक्षाओं हेतु योग्यता-आयु तथा शिक्षा व अन्य विकासात्मक गतिविधियों पर सरकारी बजट को बढ़ाया जाए। लोगों के हितों को व्यक्त करने के लिए अमृत बाज़ार पत्रिका, दि बंगाली, दि हिन्दू, व द ट्रिब्यून जैसे समाचार-पत्र शुरू किए गए। एलन ऑक्टेविन ह्यूम (1829-1912) द्वारा गठित 'इण्डियन नैशनल कांग्रेस', जो इसी आवश्यकता की उपज थी, ने राष्ट्रीय महत्त्व के मुद्दों को उठाने के लिए 25-28 दिसम्बर, 1885 को बम्बई में अपना प्रथम अधिवेशन किया।

फिरोज़शाह मेहता, गोपाल कृष्ण गोखले, एम०जी० रानाडे, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, पी० आनन्द चारुलु, और एस० सुब्रह्मण्यम अय्यर जैसे पूर्ववर्ती राष्ट्रवादी प्रबल रूप से मानते थे कि भारतीयों के सामान्य हित व कल्याण में औपनिवेशिक राज्य के शोषणवादी कृत्यों द्वारा बाधा पहुँचाई जा रही है, जैसे कि भारत से संसाधनों का अपवहन। उन्होंने, तथापि, जोर देकर कहा कि औपनिवेशिक राज्य सकारण संशोधनीय है, और अपनी गलतियों का संज्ञान होने पर वह अन्ततोगत्वा भारतीयों को उनका प्राप्य दे देगा। वे भारत में समुदाय व समाज की विषम जातीयता के विद्यमान होने के प्रति भी सचेत थे। ये ब्रिटिश प्रशासन, नए संचार माध्यम व अंग्रेज़ी शिक्षा के उपाय ही थे जिन्होंने लोगों का 'राष्ट्र' पुकारे जाने वाले एक सामूहिक समुदाय में संगठित होना संभव बनाया। लेकिन यह चेतना आम जनता के सभी हिस्सों में समान रूप से विकसित और दृढ़ नहीं थी। इस प्रकार, जबकि सुधारों के लिए माँग राष्ट्र हेतु उच्चारित की जानी थी, उसी समय, विषम प्रवर्गों का राष्ट्र-धारा में दृढ़ीकरण व समूहीकरण करने के प्रयासों की आवश्यकता थी। राष्ट्रवादियों ने इसी रूपरेखा के साथ जनमत सूचित करने का प्रयास किया।

3.3 अतिवादी राष्ट्रवादी चरण

उन्नीसवीं सदी के अन्तिम दशक में औपनिवेशिक व प्रजातीय अक्खड़पन का एक उच्चीकृत भाव था। यही समय था जब अनेक ग़ैर-यूरोपीय लोग आग्रहिता के संकेत दर्शा रहे थे। 1896 में एबिसीनिया ने इटली को हरा दिया, जबकि 1905 में छोटे-से जापान ने रूस को हरा दिया। भारत में, एनी बेसेण्ट, राजेन्द्रपाल मित्र, बाल गंगाधर तिलक, बंकिमचन्द्र चटर्जी और सबसे ऊपर विवेकानन्द ने भारतीयों की श्रेष्ठता और उनके गौरवमय अतीत को निश्चयपूर्वक कहा। इस नए आत्मविश्वास का प्रतिनिधित्व नेताओं की एक नई पीढ़ी द्वारा किया गया--बंगाल में विपिनचंद्र पाल, अरविंद घोष व अश्विनी कुमार दत्त; पंजाब में अजीत सिंह व लाला लाजपत राय; महाराष्ट्र में बाल गंगाधर तिलक; और मद्रास में जी० सुब्रह्मण्यम्, अय्यर, एन०के० रामास्वामी अय्यर, सी० विजयराघवाचारिअर, टी० प्रकाशम् और एन० कृष्णा राव। उन्होंने कांग्रेस नेताओं की नरमपंथी शैली की आलोचना की। प्रार्थना व याचना की बजाय, उन्होंने विरोध-प्रदर्शन के नए तरीकों के रूप में निष्क्रिय प्रतिरोध, बहिष्कार, स्वदेशी अपनाने और राष्ट्रीय शिक्षा की वकालत की।

भारतीयों का भाईचारा उस वक्त देखने में आया जब 1905 में बंगाल का विभाजन हुआ, और एक नया प्रांत बनाने के लिए असम को पूर्वी बंगाल के साथ सम्मिलित कर लिया गया। यह कहा गया कि कुशल प्रशासन के लिहाज से बंगाल बहुत बड़ा है और अनियन्त्रणीय है। लेकिन 1930 से ही विभिन्न अधिकारियों की लगातार घोषणा ने यह जता दिया कि विभाजन के पीछे वास्तविक कारण था बंगाल में बढ़ते राष्ट्रवादी विचारों को कमज़ोर करना, ख़ासकर 'बंगाली बाबुओं' के विचार। विभाजन के खिलाफ़ विरोध-प्रदर्शन ने जल्द ही संगठित रूप ले लिया, और अन्ततः 7 अगस्त, 1905 से 'स्वदेशी आंदोलन' आधिकारिक रूप से शुरू हो गया। विदेशी वस्तुओं और सरकारी स्कूलों का बहिष्कार विरोध का प्रमुख साधन बन गया। अनेक राष्ट्रीय विद्यालय व स्वदेशी उत्पादन इकाइयाँ खोली गईं। 16 अक्टूबर, 1905 को, जब विभाजन प्रभावी होना था, बंगाल में अनेक लोगों ने उपवास किया, और टैगोर के सुझाव पर भाईचारे के संकेतार्थ एक-दूसरे की कलाई पर राखी बाँधी। जुलूसकर्त्ताओं ने शहर के चारों ओर घूम-घूमकर रवीन्द्रनाथ टैगोर व अन्य द्वारा लिखे गीत गाए। स्वदेशी आंदोलन देश के अन्य भागों में भी फैल गया, और उसने ही असम, उड़ीसा व पंजाब में राष्ट्रवादी गतिविधि की पहली लहर चलाई।

नए नेताओं ने एक अधिक अभिकथनात्मक कांग्रेस की माँग की, जिसको कि पूर्ववर्ती राष्ट्रवादियों ने न सिर्फ़ कांग्रेस के लिए बल्कि कांग्रेस द्वारा शुरू की गई सुधार प्रक्रिया के लिए भी अनर्थकारी के

रूप में देखा। उनकी राजनीतिक शब्दावली में जन-आंदोलन व उपद्रवों में विश्वास रखना शामिल नहीं था। तथापि, यह इसलिए नहीं था कि वे शिक्षितों अथवा मध्यवर्ग से संबंध रखते थे। यह अधिकांशत: औपनिवेशिक राज्य के प्रति उनकी भिन्न धारणा और प्रचलित राजनीतिक मनोदशा की उनकी समझ के अभाव के कारण था।

बनारस में कांग्रेस के वार्षिक सम्मेलन, 1905 में नए नेता स्वदेशी, बहिष्कार व राष्ट्रीय शिक्षा को अपनी नीतियों के रूप में कांग्रेस को स्वीकार कराने में सफल रहे। 1906 में, ब्रिटिश साम्राज्य के अंतर्गत स्वतंत्र उपनिवेश-स्थिति शर्तों पर स्वराज्य-प्राप्ति को कांग्रेस के लक्ष्य के रूप में स्वीकार कर लिया गया। नए उग्रपंथी नेताओं ने नरमपंथियों को कांग्रेस से निकाल बाहर करने का प्रयास किया। इस अनर्थकारी मुहिम ने अन्ततोगत्वा 1907 में सूरत में कांग्रेस को विभाजन की ओर उन्मुख किया, जहाँ उग्रपंथियों को पार्टी से निकाल दिया गया। औपनिवेशिक राज्य ने उस स्थिति का फायदा उठाते हुए, उग्रपंथी नेताओं को सख्ती से दबाया। तिलक को जेल हुई और उन्हें बर्मा की माण्डले जेल भेज दिया गया। नरमपंथी नेताओं ने जन-सहानुभूति खोनी शुरू कर दी, और इस उम्मीद पर जीने लगे कि वे संवैधानिक सुधारों के माध्यम से देश को मुक्ति की ओर ले जा रहे हैं।

स्वदेशी आंदोलन छात्रों व शहरी युवावर्ग जैसी शक्तियों को राष्ट्रीय आंदोलन में, और असम व उड़ीसा जैसे स्थानों को मुख्यधारा में ले आया। बंगाल, पंजाब व महाराष्ट्र, तथापि, गतिविधियों के केन्द्र बने रहे। खुदीराम बोस, अरविंद व वरिंद्र घोष, रासबिहारी बोस व सचिन सान्याल, अजीत सिंह व मदनलाल धींगरा तथा दामोदर सावरकर द्वारा देशभक्ति व बलिदान की उच्च भावना दर्शाते आतंक व व्यक्तिगत कृत्यों ने युवाओं के देश की छवि परिगृहीत कर ली। खुदीराम को फाँसी दिए जाते समय, खुदीराम बोस व प्रफुल्ल चाकी, जिन्होंने मुज़फ्फरपुर के दण्डाधिकारी किंग्सफोर्ड के वाहन पर बम फेंका पर दुर्भाग्यवश दो निर्दोष महिलाएँ मारी गईं थीं, का नाम बच्चे-बच्चे की जुबान पर था। रासबिहारी बोस व सचिन सान्याल (1912) ने एक राजकीय शोभायात्रा पर बम फेंका जिससे वायसरॉय लॉर्ड हार्डिंग घायल हुए जो एक हाथी पर बैठे थे।

देशभक्ति के अपने विशुद्ध भाव के बावजूद उग्रपंथियों ने संगठनात्मक व प्रेरणाप्रद उद्देश्यों हेतु शिवजी, गणेश व काली देवी जैसे सांस्कृतिक संकेत-चिह्नों का प्रयोग किया। उनमें कृषि-वर्ग हेतु गंभीर दिलचस्पी का अभाव था, और बाद में उनके पास कोई भी सामाजिक कार्यक्रम न होने के कारण बाधा उत्पन्न हुई – उनके अपने वैचारिक विकास व आंदोलन के विकास, दोनों में।

बोध प्रश्न 1

नोट: i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) औपनिवेशिक शासन के शोषक स्वभाव के बारे में भारतीयों के अहसास का क्या परिणाम हुआ?

.....

.....

.....

.....

.....

2) पूर्ववर्ती राष्ट्रवादियों के अनुसार औपनिवेशिक प्रशासन, उनके शोषक व भेदभावपूर्ण स्वभाव का क्या योगदान था?

.....

.....

.....

.....

.....

3) उग्रपंथी नेतृत्व द्वारा सुझाए गए विरोध-प्रदर्शन के तरीके क्या थे?

.....

.....

.....

.....

.....

3.4 गदर और होमरूल आंदोलन

3.4.1 गदर आंदोलन

1905-06 से ही, उत्तरी अमेरिका में बसे भारतीयों की मदद से, रामनाथ पुरी, जी.डी. कुमार, तारकनाथ व अन्य मुक्त हिन्दूवाद का समर्थन करते विचारों का प्रसार कर रहे थे। 1911 में लाला हरदयाल के पदार्पण के साथ ही, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के पश्चिमी तट में केन्द्रित ग़दर (क्रांति) आंदोलन शुरू हो गया जो कि एक समाचार-पत्र के नाम पर था। यह वहाँ और पूर्व-एशियाई देशों में बसी विशाल भारतीय जनसंख्या की उपनिवेशवाद-विरोधी भावनाओं का केन्द्र-बिन्दु बन गया। ग़दर क्रांतिकारियों ने भारत में बिखरे क्रांतिकारियों को संगठित करने और क्रांति का नेतृत्व करने के लिए रासबिहारी बोस को आमंत्रित किया। बोस पंजाब आए और लोगों को संगठित करने के बाद, क्रांति के लिए तारीख तय की – 21 फरवरी, 1915 जो बाद में 19 फरवरी, 1915 हो गई। लेकिन सरकार को इसकी भनक लग गई और उसने ग़दर क्रांतिकारियों पर प्रतिबंध लगा दिया। पैंतालीस लोगों को फाँसी हुई जबकि सैकड़ों को जेल। ग़दर व ग़दरकारियों की क्रांतिकारी अभिदृष्टि ने तथापि, पंजाब तथा भारत में लोगों के दिलोदिमाग़ में एक अमिट छाप छोड़ी।

3.4.2 होमरूल आंदोलन

प्रथम विश्व-युद्ध के दौरान, ऐनी बेसेण्ट व तिलक के नेतृत्व वाले 'होम रूल' आंदोलन ने बिखरी हुई ताकतों को सक्रिय होने के लिए प्रेरित किया। होम रूल के लिए आयरिश आंदोलन द्वारा प्रेरित

होकर, इस आंदोलन ने इस आधार पर गृह-शासन की माँग की कि भारतीय अब वयस्क हो गए हैं। तिलक (1915) व बेसेण्ट (1916) की होम रूल लीगों ने स्वयंसेवक नामज़द किए और पर्चे छपवाए जिनमें होम रूल की माँगें, कारण व तरीके स्पष्ट किए गए थे। 1917 तक, कर्नाटक, सैण्ट्रल प्रोविन्सिज़, बंगाल व यूनाइटिड प्रोविन्स में तिलक की लीगों में 14,000 स्वयंसेवक थे, जबकि ऐनी बेसेण्ट की लीग, जो न्यू इण्डिया व कॉमवैल्थ की मार्फ़त विचारों का प्रसार करती थी, के पास 7000 स्वयंसेवक ही थे। जवाहरलाल नेहरू, शंकरलाल बांकर व व्योमकेश चक्रवर्ती समेत भारत के अनेक भावी नेताओं ने इन्हीं लीगों के स्वयंसेवक के रूप में अपना पहला राजनीतिक सबक सीखा। सरकार इस आंदोलन की प्रसिद्धी व उग्र-परिवर्तनवाद से नाखुश थी। विरोध-प्रदर्शन का एक तूफान उठाती बेसेण्ट 1917 में गिरफ़्तार कर ली गईं। वह सितम्बर में रिहा हुईं, और तिलक के आग्रह पर कांग्रेस की अध्यक्षा चुनी गईं।

तिलक और बेसेण्ट कांग्रेस को होल रूल आंदोलन के साथ शामिल करके उसका पुनरुत्थान करना चाहते थे। 1916 में कांग्रेस के इस लखनऊ अधिवेशन में होमरूल स्वयंसेवक बड़ी संख्या में आए, जहाँ कांग्रेस व मुस्लिम लीग मिले। तिलक ने निर्वाचक/साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व हेतु कांग्रेस-लीग संधि कराने में निर्णायक भूमिका निभाई। यह उस समय तक आमूल परिवर्तनवादी समाधान जैसा लगा किन्तु राष्ट्रीय आंदोलन के विकास में पतन का कारण ही सिद्ध हुआ।

3.5 गाँधी व असहयोग आंदोलन का पदार्पण

प्रथम विश्व-युद्ध ने कृषि-वर्ग व नए औद्योगिक कामगार वर्ग के जीवन को बुरी तरह प्रभावित किया। ब्रिटिशों द्वारा विश्वास-भंग किए जाने से मुस्लिम बुद्धिजीवी-वर्ग आंदोलित हो गया। ब्रिटिश युद्ध प्रयासों में भारतीय मुस्लिमों के समर्थन के बदले में, अंग्रेज़ों ने उनसे वायदा किया था कि ऑटोमन सम्राट को ख़लीफ़ा अथवा मुस्लिम विश्व के अध्यात्मिक व ऐहिक प्रधान की मान्यता देंगे। 1915 में यह लगभग उसी समय हुआ जबकि 1869 में गुजरात के काठियावाड़ में जन्मे मोहनदास करमचन्द गाँधी, दक्षिण अफ्रीका में बीस वर्ष बिताने के बाद भारत लौटे। वहाँ उन्होंने दक्षिण अफ्रीकाई सरकार की प्रजातीय व भेदभावपूर्ण नीतियों के विरुद्ध गरीब भारतीय कुलियों व अन्य को संगठित किया था। यहाँ आकर उन्होंने राजनीतिक हथियारों के रूप में सत्याग्रह व अहिंसा के तरीकों को आजमाया।

3.5.1 गाँधी और कृषि-वर्ग

सन् 1917 में, भारतीयों ने गाँधीजी के आंदोलनकारी तरीकों का प्रथम परीक्षण बिहार के चम्पारण में देखा, जहाँ यूरोपीय नील-रोपक खेतीहरों को ग़ैर-कानूनी लगान देने व अन्य बलात् ग्रहणों के लिए दवाब डालते थे। जब गाँधीजी चम्पारण पहुँचे तो जिला कमिश्नर ने उन्हें जिला छोड़ने का आदेश दिया, जिसे उन्होंने ठुकरा दिया। राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में यह एक नई घटना थी। गाँधी व सहयोगियों ने कृषकों की यथार्थ व विस्तृत शिकायतों को दर्ज किया, और उन्हें सरकार के सामने रखा। विपुल तथ्यों को नकारने में असमर्थ सरकार ने अन्ततः रोपकों पर दवाब डला कि वे कृषकों को अवैध बलात् ग्रहण का 25% लौटाएँ। इससे रोपकों की साख और उनसे किसानों का भय दोनों खत्म हुए। गाँधीजी ने अहमदाबाद में मिल-मालिकों के विरुद्ध कर्मचारियों को, और औपनिवेशिक प्रशासन के विरुद्ध खेड़ा किसानों का नेतृत्व भी किया। 1918 के अन्त तक, यह शोषण व अन्याय के विरुद्ध अपने अनूठे विरोध-प्रदर्शनों के माध्यम से स्वयं को स्थापित कर चुके थे। अपने सरल और आत्मसंयमी जीवन से ही वह जन-सामान्य में जाने जाने लगे।

मुहम्मद अली, शौकत अली, अबुल कलाम आज़ाद और उलमा के वर्ग खासकर फिरंगी महल, लखनऊ के, इस समय ख़िलाफ़त आंदोलन में व्यस्त थे। जब वे गाँधीजी के पास पहुँचे, उन्होंने उनको अपने वाद के प्रति सहानुभूतिशील पाया। गाँधीजी ने कांग्रेस से अपील की कि ख़िलाफ़तियों के साथ चलें जिसके विरुद्ध ब्रिटिशों द्वारा एक गंभीर विश्वास-भंग हुआ। इस मोड़ पर, सरकार ने जल्दी में 'रोलट एक्ट' पास कर दिया। यह अधिनियम भारतीयों को बिना मुकदमा चलाए जेल में बंद कर दिए जाने की व्यवस्था देता था, और यह शीघ्र ही आंदोलन के लिए जी-जान से जुट जाने के लिए आधार बन गया।

3.5.2 रोलट एक्ट के प्रति विरोध

इस क्रूर कानून के खिलाफ़ विरोध-प्रदर्शन के लिए गाँधीजी ने सत्याग्रह सभाएँ बनाने का सुझाव दिया। 30 मार्च, 1919 के लिए एक अखिल भारतीय हड़ताल की योजना बनाई गई, जो कि 6 अप्रैल, 1919, तक के लिए टाल दी गई। हड़ताल उड़ीसा, असम, मद्रास, बम्बई व बंगाल में की गई। 13 अप्रैल, 1919 को बैसाखी के दिन, जनरल डायर के आदेश पर पुलिस ने अमृतसर के जलियाँवाला बाग़ में एक शांतिपूर्ण सभा पर अंधा-धुंध गोलियाँ चलाईं, और एक कार्यालिक अनुमान के अनुसार, 379 नि:शस्त्र व रक्षाहीन लोगों को मार डाला। इसके बाद मार्शल लॉ (सैनिक कानून) लगा दिया गया, और लोगों को यूरोपियनों के सामने पेट के बल रेंगने पर भी मजबूर किया गया। जलियाँवाला बाग़ घटना ने देश में उत्तेजना फैला दी। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने ब्रिटिश क्राउन द्वारा प्रदत्त 'नाइटहुड' की उपाधि लौटा दी। ब्रिटिश लोगों द्वारा जनरल डायर को कठघरे में खड़ा करने की बजाय, उसे एक धन की थैली भेंट की गई। घटना की तहकीक़ात कर रहे 'हण्टर कमीशन' ने, गाँधीजी के शब्दों में, "पन्ना-दर-पन्ना लीपा-पोती" प्रकाशित की।

3.5.3 असहयोग आंदोलन

नवम्बर 1919 में, इलाहाबाद में अखिल भारतीय ख़िलाफत कमेटी की बैठक हुई, और गाँधीजी का अहिंसावादी असहयोग आंदोलन का प्रस्ताव मान लिया गया। यह आंदोलन देशभर में छा गया। बंगाल में अबुल कलाम आज़ाद, मौलाना अक्रम खान और मुनिरुज़मन इस्लामाबादी ने आन्दोलन लोकप्रिय कर दिया। अक्रम खान के मोहम्मदी ने स्वदेशी व बहिष्कार की विचारधारा का प्रचार किया। आन्दोलन के संदेश को फैलाने में मोहम्मद अली के 'हमदर्द' और 'कामरेड', तथा अबुल कलाम आज़ाद के 'अल हिलाल' प्रबल संचार-साधन रहे। इसी बीच, गाँधीजी ने कांग्रेस को एक अहिंसात्मक असहयोग आंदोलन का सिद्धांत स्वीकार करवाने का प्रयास किया। उनका विचार था कि पंजाब व ख़िलाफ़त के अन्यायों को असहयोग का आधार बनाया जाए। सितम्बर 1920 में कलकत्ता में हुए विशेष कांग्रेस अधिवेशन में, इस पर कुछ विरोध हुआ। दिसम्बर 1920 में, तथापि, कांग्रेस ने नागपुर में अपने वार्षिक अधिवेशन में असहयोग का प्रस्ताव निर्विरोध प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

ख़िलाफ़त व असहयोग ने एक साथ मिलकर भारत का प्रथम शक्तिशाली व्यापक महापरिवर्तन किया। देशभर में स्कूलों, अदालतों व विदेशी-वस्त्रों का बहिष्कार किया गया, और चरखा व स्वदेशी-वस्त्र अपनाए गए। कांग्रेस नागपुर में पहले ही घोषणा कर चुकी थी कि स्वराज शांतिपूर्ण व विधिसंगत तरीकों से ही लिया जाना है। आसन्न स्वतंत्रता को लेकर एक नया जोश था, जो कि गाँधीजी ने एक साल के भीतर लाने का वायदा किया था। अवध, बंगाल, मद्रास, बम्बई, बिहार व असम में कृषक आन्दोलन में शामिल हो गए। एक नया नेतृत्व, वृहदत: ग्रामीण क्षेत्रों से, उद्गमित हुआ। गाँधीजी के आंदोलन व संदेश ने बिहार व मणिपुर की पहाड़ियों में जनजातीय आंदोलनों को भी प्रभावित किया। लेकिन 4 फरवरी, 1922 को, गोरखपुर के चौरीचौरा में लोगों के एक समूह ने पुलिस द्वारा उकसाये जाने पर पुलिस थाने पर हमला किया और पुलिसकर्मियों को जिंदा जला दिया।

गाँधीजी ने आंदोलन वापस ले लिया, और अधिकतर नेताओं द्वारा आलोचना किए जाने पर भी वह अपने निर्णय पर अडिग रहे। उन्होंने अहिंसा के सिद्धांत को छोड़ देने अथवा उसमें ढील देने से इंकार कर दिया।

बोध प्रश्न 2

नोट: i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) चम्पारण में कृषक आंदोलन में गाँधीजी की भागीदारी का क्या परिणाम हुआ?

.....

.....

.....

.....

.....

2) ब्रिटिश सरकार ने रोलट एक्ट क्यों पास किया?

.....

.....

.....

.....

.....

3) असहयोग और ख़िलाफ़त आंदोलन में विरोध-प्रदर्शन का क्या तरीका अपनाया गया?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3.6 कृषि-वर्ग, कामगार वर्गों का वामपंथ का उदय

असहयोग आंदोलन अचानक वापस लिए जाने से एक असहाय स्थिति पैदा हो गई। सी०आर०दास० (1870-1925) तथा मोतीलाल नेहरू (1861-1931) ने उन स्वराजियों का नेतृत्व किया जो विधान सभाओं के अन्दर घुसकर उन्हें बर्बाद करना चाहते थे। गाँधीजी के कार्यक्रम में चुनावी लड़ाई के लिए कोई स्थान न था। इसलिए, जबकि स्वराजी चुनाव लड़े और सैण्ट्रल प्रोविन्स, बंगाल व केन्द्रीय विधान सभा में भी जोरदार धावा बोला, गाँधीजी व अन्य ने रचनात्मक कार्य की अपनी सामाजिक कार्यसूची पर ध्यान केंद्रित किया। इसमें शामिल थे – ग्राम पुनर्निर्माण कार्य, शिल्पकारों का उत्थान, चरखे का प्रचार और अस्पृश्यता निवारण। गाँधीजी के विचार से, सामाजिक व राजनीतिक आंदोलन एक-दूसरे से विलग नहीं किए जा सकते, और यहाँ उनके विचार उनसे भिन्न थे जिनके लिए राष्ट्रवाद का अर्थ मात्र देश को विदेशी शासन से मुक्त कराना था।

3.6.1 गाँधी-अम्बेडकर विवाद

गाँधीजी ने अस्पृश्यता-प्रथा के खिलाफ़ अपना सबसे बड़ा आंदोलन शुरू किया। उन्होंने उस व्यावसायिक पदानुक्रम के द्योतन के विरुद्ध तर्क प्रस्तुत किया जो धीरे-धीरे वर्ण-व्यवस्था को परिभाषित करने लगी थी। चूँकि कुछ काम निम्नतर समझे जाते थे, इन अनिवार्य कामों को करने वाला अछूत माना जाने लगा। उन्होंने पदानुक्रम के इस द्योतन को खत्म करना चाहा, ताकि वर्ण-व्यवस्था अपने विशुद्ध व भेदभाव रहित रूप को पुनर्प्राप्त कर सके। अम्बेडकर ने गाँधीजी का विरोध किया, और तर्क दिया कि अस्पृश्यता वर्ण-व्यवस्था द्वारा ही वैध करार दी गई है। जब तक जाति-व्यवस्था को ही समाप्त नहीं कर दिया जाता, जाति-दमन नहीं जाएगा। गाँधीजी, तथापि, इससे सहमत नहीं थे क्योंकि जाति-प्रथा सदियों से चलती आई थी, और इसकी कैंसर-सी होती वृद्धि को ही समाप्त करने की आवश्यकता है। दोनों ही प्रबल रूप से तर्क प्रस्तुत करते थे, लेकिन राष्ट्रीय आंदोलन के लोकतांत्रिक लोकाचार के प्रति निष्ठावान रहते हुए वे एक-दूसरे के मत का सम्मान करते थे और अपनी-अपनी स्थिति की विशेषताएँ एक-दूसरे को समझाने के प्रयास करते थे। सत्याग्रह को हथियार के रूप में प्रयोग करते हुए केरल के वैकोम और गुरुवयुर में मंदिर-प्रवेश आंदोलन और निम्न जाति के लोगों उत्थान हेतु देशव्यापी आंदोलन गाँधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम के प्रत्यक्ष परिणाम थे।

3.6.2 मार्क्सवाद का आगमन

1920 के दशक में बड़ी संख्या में लोग, खासकर युवा, मार्क्सवाद की ओर आकर्षित होने लगे। रूसी क्रांति ने उनकी कल्पना को प्रेरित किया था। बांग्ला कवि काज़ी नज़रुल इस्लाम ने इस नए उत्साह को सशक्त अभिव्यक्ति दी कि समाजवादी विचार राष्ट्रवादियों के मस्तिष्क में घर कर चुका है। उनके 'सर्वहारा' (मज़दूर वर्ग) और 'बिशेर बंशी' (विष-बाँसुरी) पर प्रतिबंध लगा दिया गया, और उन्हें एक साल की क़ैद हुई। एम०एन० राय समाजवादी युवावर्ग के शीर्षस्थ नेता थे। मद्रास, बंगाल व बम्बई में सिंगरावेलु, हेमन्त सरकार, मुज़फ्फर अहमद, एस०ए० दांगे व शौकत उस्मानी द्वारा श्रमिक व कृषक दल संगठित किए गए और पंजाब में 'कीर्ति किसान पार्टी' की स्थापना की गई। बाद में, वे 'किसान व कामगार पार्टी' के झण्डे तले ले आए गए। इनमें परवर्ती ने कांग्रेस के भीतर ही रहकर काम किया जिसे वह एक लोक दल बनाना चाहती थी। श्रमिक-संघ कार्यकर्त्ताओं ने राष्ट्रीय स्तर पर श्रमिकों को संगठित करने, और श्रम-संबंधी मुद्दों को सुस्पष्ट करने में मदद की। भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी (1925) के निर्माण ने समाजवादी आंदोलन को एक केन्द्र प्रदान किया और राष्ट्रीय आंदोलन को एक उग्र उन्मूलनवादी मोड़ भी। व्यक्तिगत बहादुरी के काम, तथापि,

अभी तक क्रांतिकारी अतिवादियों का संचलन करते थे। लेकिन ये क्रांतिकारी एक वृहदतर सामाजिक कार्यक्रम के मद्देनज़र संगठित थे। यह नई विचारधारा सूर्यसेन, भगत सिंह, जतिन मुखर्जी (बाघा जतिन), जादू गोपाल मुखर्जी भगवत् चरण वोहरा, यशपाल और चन्द्रशेखर आज़ाद के कार्यों में प्रतिबिम्बित हुई। सचीन्द्र सान्याल कृत 'फ़िलासॅफ़ी ऑव दि बॉम' इस परिवर्तन का सबसे अच्छा कथन था। परिणामत:, 'हिन्दुस्तान क्रांति सेना' बनाई गई।

1907 में जन्मे व प्रसिद्ध क्रांतिकारी अजीत सिंह के भतीजे, भगतसिंह (1907-1931) ने इस परिवर्तन का सबसे अच्छा संकेत दिया। उन्होंने 1926 में 'पंजाब नौजवान भारत सभा' बनाई। भगत सिंह किसी भी क्रांति के लिए जनसाधारण का महत्त्व समझते थे। उन्होंने समाज पर सम्प्रदायवाद के बढ़ते खतरे को भी महसूस किया। 1928 में ही, उन्होंने व उनके मित्रों ने नौजवान सभा में किसी भी धार्मिक अथवा साम्प्रदायिक संगठन के सदस्यों के प्रवेश का विरोध किया, जिसका निर्णय 1938 में कांग्रेस द्वारा ही लिया गया था। बाइस वर्ष की उम्र में, अपने कारावास के दौरान, उन्होंने प्रसिद्ध पुस्तिका लिखी वाइ आई ऐम ऐन् एथिइस्ट (मैं अनीश्वरवादी क्यों हूँ)। वह समझ सकते थे कि परिवर्तन की शक्तियाँ भारत के खेतों व कारखानों में ही बसी हैं।

'मास्टर दा' के नाम से लोकप्रिय, सूर्यसेन (1897-1934) एक अन्य प्रतिभाशाली क्रांतिकारी अतिवादी थे। सूर्यसेन व उनके अनुयायियों ने 18 अप्रैल, 1930 को चित्तगोंग स्थित दो शस्त्रागारों पर असफल रूप से धावा बोला। 1933 में सेन को गिरफ़्तार कर लिया गया और 12 जनवरी, 1934 को उन्हें फाँसी हो गई। चित्तगोंग शस्त्रागार धावे में बड़ी संख्या में महिलाओं ने भाग लिया। असहयोग-पश्चात् चरण में प्रीतिलता वाडेकर, कल्पना दत्त, शांति घोष, सुनीति चौधरी, मीना दास, मणिकुंतला सेन और आशालता सेन समेत अनेक महिलाओं ने राष्ट्रीय आंदोलन में तथा कृषकों व श्रमिकों को संगठित करने में निर्णायक भूमिका निभाई।

3.6.3 सम्प्रदायवाद का विकास

1920 के दशक में कुछ दिग्गज नेता या तो कांग्रेस के साथ जुड़ गए या फिर राष्ट्रीय विचारधारा के साथ। अनमनीय साम्प्रदायिक विचारों के साथ मोहम्मद अली जिन्ना ने गाँधीवादी राजनीति के प्रतिक्रियास्वरूप कांग्रेस छोड़ दी। लाजपत राय, वीर सावरकर, आशुतोष लाहिड़ी व अन्य अनेक देशभक्त राष्ट्रीय आंदोलनों के लोकप्रिय पहलू को हिन्दू समुदाय के सिद्धांत के प्रति हानिकारक के रूप में देखने लगे। उत्तर-पश्चिमी सीमान्त प्रान्त (एन.डब्ल्यू.एफ.पी.) में कोहाट, मालाबार व कलकत्ता (1926) में असहयोग-पश्चात् साम्प्रदायिक दंगों ने साम्प्रदायिक बोध को बढ़ाने में सहयोग दिया। ख़िलाफ़त के दिनों में गाँधीजी के निकट सहयोगियों, अली बंधुओं, ने गाँधीजी पर मुसलमानों से गद्दारी का आरोप लगाया। साम्प्रदायिक विचार व संगठन द्रुत गति से प्रचुरोद्भूत हुए। इसके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण कारण थे – राष्ट्रीय आंदोलन के कार्यक्रम की सफलता और इस आंदोलन में शामिल होने के लिए कृषकों, श्रमिकों व जनसाधारण को प्रेरित करने की अभिदृष्टि। राजभक्त व उच्च वर्ग राष्ट्रीय आंदोलन व कांग्रेस के इस आमूल-चूल परिवर्तन से घबराए हुए थे। इससे अंशत: यह भी स्पष्ट होता है कि मुस्लिम लीग व हिन्दू महासभा जैसे अधिकतर साम्प्रदायिक संगठन क्यों पूर्णत: कांग्रेस-विरोधी थे।

3.7 नागरिक अवज्ञा आंदोलन और उसके परिणाम

3.7.1 सायमन आयोग

आंदोलन के इसी मोड़कर, भारत के लिए भावी सुधारों की सिफारिश करने ब्रिटिशों ने सायमन

कमीशन भेजा जिसमें एक भारतीय प्रतिनिधि भी था। कांग्रेस ने, अपने 1927 अधिवेशन में, कमीशन का बहिष्कार करने का फैसला किया। यह कमीशन जहाँ भी गया, हड़ताल से उसका स्वागत हुआ। अधिकारियों ने एक आम-सहमति वाला संविधान प्रस्तुत करने के लिए भारतीय नेताओं को चुनौती दी। कांग्रेस ने मोतीलाल नेहरू की देखरेख में एक समिति गठित की जिसने 'नेहरू रिपोर्ट' पेश की। जिन्ना ने उन संशोधनों की सिफ़ारिश की, जो रिपोर्ट में सुझाई गई राज्य व्यवस्था के प्रत्येक लक्षण को बदल डालते। सुभाष बोस और नेहरू ने भी देश के लिए सम्पूर्ण स्वाधीनता की सिफ़ारिश न करने के लिए रिपोर्ट पर आक्षेप किया।

3.7.2 नागरिक-अवज्ञा आंदोलन

स्वाधीनता के साथ अपने औपचारिक लक्ष्य के रूप में, 26 जनवरी, 1930 का दिन स्वाधीनता दिवस के रूप में मनाया गया। इस अधिवेशन में कार्यकारी समिति को एक नागरिक अवज्ञा कार्यक्रम शुरू करने के लिए अधिकृत किया गया। गाँधीजी ने अपने कार्यक्रम को विस्तारपूर्वक लिखते हुए, तथा सरकार को आगे आने और उन्हें नमक-कानून तोड़ने से रोकते को चुनौती देते हुए वायसरॉय को एक अन्तिम चेतावनी भेजी। 12 मार्च, 1930 को 78 स्वयंसेवकों के साथ उन्होंने अहमदाबाद से दाण्डी के तट तक 240 कि.मी. लम्बा मार्च शुरू किया, और 6 अप्रैल, 1930 को उन्होंने सांकेतिक रूप से नमक-कानून तोड़ा। पूरा देश नागरिक-अवज्ञा आंदोलन में कूद पड़ा। बंगाल में, नमक-कानून तोड़ने के लिए स्वयंसेवक कोमिला, पूर्व बंगाल में अभय आश्रम से पश्चिम बंगाल में कोन्तई, मिदनापुर तट तक गए। सी० राजगोपालाचारी ने तंजौर तट पर त्रिचिनापल्ली से वेदारण्यम् तक प्रयोग किया, जबकि मालाबार तट पर के० केलप्पन ने नमक बनाया। नागरिक अवज्ञा का एक नया केन्द्र उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रान्त के रूप में उद्गमित हुआ, जहाँ खान अब्दुल गफ़्फ़ार खान व उनके अनुयायियों – खुदाइ खिदमतगार – ने अहिंसात्मक नागरिक अवज्ञा शुरू की। जब उन पर गोली चलाने का आदेश मिला, गढ़वाली सैनिकों ने आज्ञा मानने से इंकार कर दिया, और फिर उन्हें बंदी बना लिया गया। शराब व विदेशी-वस्त्र दुकानों पर धरना देने, कर चुकाने से इंकार करने व कानूनी पेशा छोड़ देने की घटनाओं ने आंदोलन का संकेत किया। बिहार व बंगाल में कृषकों ने चौकीदारी कर का विरोध किया। उड़ीसा के पुरी ज़िले में वन-कानून-विरोधी अभियान शुरू हुए। 4 मई, 1930 को गाँधीजी गिरफ़्तार कर लिए गए। विरोध में देशभर में हड़तालें व प्रदर्शन हुए। आंदोलन तब वापस लिया गया जब गाँधी-इर्विन समझौते पर हस्ताक्षर हो गए, और गाँधीजी ब्रिटेन में द्वितीय गोल-मेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए राजी हो गए। इस सम्मेलन की उपलब्धि शून्य रही क्योंकि अधिकारियों ने कांग्रेस को भी औरों की तरह ही एक विचार करार दिया और खुले रूप से कांग्रेस के विरुद्ध राजकुमारों, प्रतिक्रियावादियों, दमित वर्ग नेताओं व साम्प्रदायिक नेताओं को प्रोत्साहित किया।

अनेक प्रान्तों में कांग्रेस द्वारा जीते गए 1937 के चुनावों के दौरान, चुनावीय राजनीति में प्रविष्ट होते, और फिर पदासीन होते एक जन-आंदोलन की दुविधा तीक्ष्ण हो गई। काफी समीक्षा व तर्क-वितर्क के बाद, कांग्रेस ने छह प्रान्तों में मंत्रिमण्डल बनाने का निर्णय लिया, और अपना सामाजिक व आर्थिक कार्यक्रम चालू किया। इससे कुछ हलकों में आशंका पैदा हुई, जैसे कि यूनाइटेड प्रोविन्सिज़ में भू-स्वामी। मुस्लिम लीग भी मुसलमानों पर उसकी न शंसताओं के लिए मंत्रिमण्डलों पर आक्षेप करने लगी। यद्यपि जो कभी साबित नहीं हुए, ये अधिप्रचारक आरोप कांग्रेस के शासन वाले एक हिन्दू राज के भावी स्वरूप को तैयार करने में प्रयोग किए गए। मद्रास व बम्बई के मंत्रिमण्डल जैसे कुछ कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों ने कम्यूनिस्ट व अन्य उग्र-उन्मूलनवादी समूहों को दबाने के लिए काम किया।

बोध प्रश्न 3

नोट: i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) गाँधीजी व अम्बेडकर के बीच भौतिक मतभेद क्या थे?

.....

.....

.....

.....

.....

2) सम्प्रदायवाद के उदय हेतु सबसे महत्त्वपूर्ण कारण क्या था?

.....

.....

.....

.....

.....

3) नेहरू रिपोर्ट की मुख्य सिफारिशें लिखें।

.....

.....

.....

.....

.....

3.8 विश्वयुद्ध और 'भारत छोड़ो' आंदोलन

यूरोप में 1 सितम्बर, 1939 को द्वितीय विश्वयुद्ध की घोषणा हो गई। भारतीय सरकार ने, भारत में जनमत की सलाह लिए बग़ैर, जर्मनी से युद्ध की घोषणा कर दी। अनेक कारणों से युद्ध अवश्यंभावी हो गया, बल्कि मूल रूप से हिटलर व नाज़ीवाद के उद्‌गमन के कारण। हिटलर ने लगभग 60 लाख यहूदियों को निकाल दिया क्योंकि उसका विश्वास था वे एक नीची प्रजाति में जन्मे

हैं और प्रथम विश्वयुद्ध में उसकी हार समेत जर्मन समाज की सभी बुराइयों की वजह वही हैं। इटली में मुसोलिनी, स्पेन में जेनरल फ्रैन्को और जापान में उभरती सैन्य तानाशाही ने नाज़ी आक्रमण को एक सत्तावादी और फासीवादी सैन्य-व्यूह प्रदान किया। भारतीयों के लिए, युद्ध ने उपनिवेश-विरोधी आंदोलन के पुनरुत्थान का अवसर मुहैया कराया। तथापि, भारतीय नेतागण इस प्रकार के अवसरवाद के पक्ष में नहीं थे, क्योंकि यह लोकतांत्रिक, फासीवाद-विरोधी ताकतों के सिद्धांत विरुद्ध होता। लेकिन ब्रिटिशों ने, युद्ध को लोकतंत्र हेतु लड़ाई के रूप में घोषित करने के बावज़ूद, भारतीयों व उनके हेतुक के लिए कोई रुचि नहीं दर्शायी। ध्यानपूर्वक विचार करने के बाद, गाँधीजी ने 17 अक्टूबर, 1940 को ध्यानपूर्वक चुने गए वैयक्तिक सत्याग्रहियों को लेकर एक हल्का व्यक्तिगत सत्याग्रह शुरू करने का निर्णय लिया। पहले व्यक्ति थे विनोबा भावे, और दूसरे जवाहरलाल नेहरू। इनको युद्ध-प्रयास से सहयोग के विरुद्ध सार्वजनिक भाषण, और उसके बाद गिरफ़्तारी देनी होती थी।

दिसम्बर 1941 में जापान युद्ध में शामिल हो गया और भारतीय सीमाओं को चुनौती दी। जापानियों की दया पर आश्रित छोड़कर ब्रिटिश फ़ौजों के पीछे हटने की ख़बर ने भारत में क्षोभ और असहाय्य स्थिति का भाव पैदा कर दिया। सैनिक अत्याचारों और युद्ध-काल संकट ने लोगों को बेचैन कर दिया। गाँधीजी ने इस बढ़ते असंतोष को समझा और, अधिकतर नेताओं के बहुत ही संकोच के बावजूद, एक आंदोलन शुरू करने का निर्णय किया। 8 अगस्त, 1942 को बम्बई में, उन्होंने 'करो या मरो' का नारा दिया और ब्रिटिशों को 'भारत छोड़ो' कहा। उसी रात गाँधीजी व अन्य को गिरफ़्तार कर लिया गया। अगले ही दिन से, देशभर में लोग घरों से बाहर निकल आए, और एक विशाल उपनिवेश-विरोधी आंदोलन शुरू हो गया। सरकारी सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाया गया, और पूर्वी उत्तर-प्रदेश में बलिया, बंगाल में मिदनापुर, व महाराष्ट्र के सतारा में कृषक ठिकानों पर समानान्तर सरकारें स्थापित की गईं। जयप्रकाश नारायण, राम मनोहर लोहिया (1910-1967), अच्युत पटवर्धन, अरुणा आसफ़ अली ने वीरतापूर्ण योगदान दिया। अरुणा आसफ़ अली एक भूमिगत रेडियो चलाती थीं। ब्रिटिश अधिकारियों ने इस आंदोलन को बड़ी सख्ती से दबाया।

3.9 युद्धोपरांत लहर

3.9.1 आज़ाद हिन्द फौज़ (आई.एन.ए.)

युद्ध समाप्त होने के बाद, जुलाई 1945 में, ये नेतागण आज़ाद कर दिए गए और एक चुनाव की घोषणा कर दी गई। इस बीच, आज़ाद हिन्द फ़ौज (आई.एन.ए.) ने लोकप्रिय छवि बना ली थी। इसका गठन 1940 में ब्रिटिश इण्डियन आर्मी के मोहन सिंह व अन्य ने किया, जो जापानियों द्वारा युद्ध-बन्दी बना लिए गए थे। चकाचौंध कर देने वाले साहस-प्रदर्शन में देश को ले जाकर सुभाष चन्द्र बोस ने फ़ौज को नए सिरे से संगठित करने में अग्रणी भूमिका निभाई। जापानी सेना के हाथों में सभी प्रकार के भेदभाव को झेलते सैनिकों ने उस दुर्गम भू-भाग को ललकारा और कोहिमा सीमा तक पहुँच गए। लेकिन जल्द ही जापानियों का लौटना शुरू हो गया, और आई.एन.ए. का लाल किले पर भारतीय तिरंगा फहराने का सपना चूर-चूर हो गया। 1945 में आई.एन.ए. सैनिक ब्रिटिशों द्वारा बन्दी बना लिए गए और उन पर राजद्रोह का मुकदमा चला। मुकदमे की पहली सुनवाई नवम्बर में लाल किले में शुरू हुई। नवम्बर 1945 में और फरवरी 1946 में, पूरे देश ने क्रोध में भर इन भारतीय स्वाधीनता के वीरों पर मुकदमों और सज़ाओं के खिलाफ विरोध-प्रदर्शन किया।

इस राष्ट्रवादी लहर के बीच ही प्रान्तीय एवं केन्द्रीय विधानमण्डलों के चुनाव हुए। यद्यपि मताधिकार जनसंख्या के एक छोटे वर्ग तक ही सीमित था, यह चुनाव राष्ट्रवाद और उनके विरोधियों की

विचारधाराओं का एक इम्तहान था। कांग्रेस प्रत्याशियों को अभूतपूर्व सफलताएँ हासिल हुईं, जबकि मुस्लिम लीग ने सभी मुस्लिम सीटें जीत लीं। इसने भारतीय मुसलमानों के एकमात्र प्रतिनिधि होने का दावा साबित कर दिया। बड़ी संख्या में वीरों व सजदानशीनों ने पंजाब व सिंध में लीग के लिए वोट माँगा। उलमाओं के निकाय, ज़माइत-उल-उलमा-ए-हिन्द, जो पाकिस्तान की माँग के खिलाफ़ था, ने कांग्रेस का खुले रूप से समर्थन किया। हिन्दू महासभा, जो हिन्दुओं की एकमात्र प्रतिनिधि होने का दावा करती थी, बुरी तरह खदेड़ दी गई – कलकत्ता सीट पर श्यामा प्रसाद मुखर्जी के नेतृत्व में उसे अपने विरोधी के 6,000 के मुकाबले मात्र 146 वोट मिले।

बोध प्रश्न 4

नोट :i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में आज़ाद हिन्द फ़ौज (आई.एन.ए.) की क्या भूमिका थी?

.....

.....

.....

.....

.....

2) ब्रिटिशों ने भारत क्यों छोड़ा?

.....

.....

.....

.....

.....

3.10 सांप्रदायिक दंगे, स्वतंत्रता और विभाजन

बम्बई व कराची में 'नेवल रेटिंग्स' के विद्रोह ने सेना में राजद्रोह के स्पष्ट संकेत दिए। नौकरशाही का नैतिक पतन भी प्रत्यक्ष था। यह स्पष्ट था कि ब्रिटेन भारत पर अब और अधिक शासन नहीं कर सकता था। मुस्लिम लीग ने, नौकरशाही के सक्रिय संरक्षण के साथ, पहले पाकिस्तान दिए बग़ैर ब्रिटिशों द्वारा भारत छोड़ने के किसी भी कदम का विरोध किया। भावी इन्तज़ामात की सिफ़ारिश के लिए 1946 में कैबिनेट मिशन भेजा गया। मिशन ने पाकिस्तान को एक जीवनक्षम विकल्प के रूप में निरस्त कर दिया, लेकिन प्रान्तों की एक सामूहिक व्यवस्था वाली सिफ़ारिश को लीग द्वारा उसकी पाकिस्तान की माँग के अनुमोदन के रूप में लिया गया, जिसको नेहरू जैसे कांग्रेसी नेताओं

ने दृढ़ता से ठुकरा दिया। पाकिस्तान की अपनी माँग मनवाने के लिए लीग ने, कैबिनेट मिशन की सिफ़ारिशें ठुकरा दीं और 16 अगस्त, 1946 को 'सीधी कार्रवाही दिवस' घोषित कर दिया। बिना किसी उपनिवेश-विरोधी कार्यक्रम के साथ, कांग्रेस व उनके खिलाफ़ जो पाकिस्तान के विरोध में थे, सीधी कार्रवाही का संकेत मिला। परिणाम हुआ कलकत्ता में एक साम्प्रदायिक हत्याकाण्ड जिसमें 5000 से अधिक जानें गईं; यहीं मुस्लिम लीगी मुख्यमंत्री ने 16 अगस्त अवकाश घोषित किया था। प्रतिक्रिया नोआखली में हिन्दू-विरोधी हिंसा के रूप में फूटी, जो असहयोग/ ख़िलाफत के दिनों के बाद से कृषक आंदोलन की एक ख़ास दूरवर्ती-चौकी बन चुकी थी। साम्प्रदायिक विचारधारा अब पूरी तरह से हावी थी। बिहार में जवाबी प्रतिक्रियाएँ शुरू हो गईं, जहाँ गाँव के गाँव जला डाले गए और इस हिंस्रकता के साथ कि हज़ारों की संख्या में मुसलमान मारे गए; मजबूर होकर नेहरू ने कहा कि अगर दंगे न रुके तो इलाके में बम गिराएँगे। इस स्थिति के लिए औपनिवेशिक स्वामीजन ज़िम्मेदारी ही लेने को तैयार नहीं थे जिन्होंने कि इसको पैदा करने में मनोयोग से सहायता की थी। उन्होंने अब भारत छोड़ने का फैसला कर लिया जो उपनिवेशवाद के अनिवार्यत: ग़ैर-जिम्मेदाराना चरित्र के प्रति विश्वासघात था; इसने अधिकांश औपनिवेशिक समाजों को अस्तव्यस्तता की स्थिति में छोड़ दिया – या तो बँटवारा करके या फिर उन्हें भीतर से तोड़ के।

यह आभास होने लगा कि स्वतंत्रता कहीं आसपास ही है, पाकिस्तान भी बहुत दूर नहीं था। दोनों ही अपरिहार्य थे। पाकिस्तान न मिलने के परिणाम कलकत्ता, नोआखली और बिहार के दंगों से स्पष्ट थे। इस प्रकार, जब कांग्रेसी नेताओं व गाँधीजी ने विभाजन स्वीकार किया, वे अपरिहार्य को स्वीकार कर रहे थे। ऐसी आशा थी कि विभाजन सम्प्रदायवाद की समस्या को हमेशा के लिए समाप्त कर देगा। 15 अगस्त, 1947 को भारत स्वतंत्र हो गया।

3.11 सारांश

स्वाधीनता उपनिवेशवाद के विरुद्ध एक लम्बे संघर्ष का परिणाम थी। पूर्ववर्ती राष्ट्रवादियों व अतिवादियों ने लोगों के मन में देशभक्ति का एक उच्चभाव जगा दिया। कांग्रेस के तत्त्वावधान में गाँधीजी कृषि-वर्ग, श्रमिक वर्गों व शोषित जनसाधारण को राष्ट्रवाद के दायरे में लाए। राष्ट्रवादियों के सामाजिक कार्यक्रमों का उद्देश्य लोगों की मात्र राजनीतिक स्वतंत्रता से कहीं अधिक था। लेकिन पूर्ववर्ती राष्ट्रवादियों का यह विचार कि भारत एक निर्माणशील राष्ट्र है, सत्य सिद्ध हुआ क्योंकि विभाजन ने भारत राष्ट्र की सशक्त नींव का अभाव दर्शाया। राष्ट्रवाद के ज़ोर, जिसने ब्रिटिशों को भारत छोड़ने पर मजबूर किया, का प्रयोग अब एक लोकतांत्रिक व धर्मनिरपेक्ष नीति की मदद से ग़रीबी, निरक्षरता व विकास के सामाजिक प्रश्नों को हल करने में किया जाना था।

3.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

चन्द्र, विपिन व अन्य (सं०), *इण्डिया'ज़ स्ट्रगल फॉर इण्डिपेण्डेंस*, दिल्ली, 1989।

दत्त, आर. *पाल्मे, इण्डिया टुडे*, दिल्ली, 1949।

नेहरू, जवाहरलाल, *एन ऑटोबायोग्राफी*, दिल्ली, 1934।

प्रसाद, राजेन्द्र, *इण्डिया डिवाइडिड*, बम्बई, 1947।

बनर्जी, सुरेन्द्रनाथ, *ए नेशन इन् दि मेकिंग*, कलकत्ता, 1963।

बॉन्ड्यूरांत्, वी० जोन, *कॉन्क्वैस्ट ऑव वाइअलन्स्*, बरकेली, 1971।

वर्मा, शिव (सं०), *सेलेक्टिड राइटिंग्स ऑव शहीद भगत सिंह*, नई दिल्ली, 1986।

सरकार, सुमित, *मॉडर्न इण्डिया* : 1885-1947, दिल्ली, 1983।

3.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) वे अपनी स्थिति के बारे में सचेत हो गए तथा उन्होंने अंग्रेज़ों का विरोध किया।

2) पूर्ववर्ती राष्ट्रवादियों का मानना था कि औपनिवेशिक राज्य ने भारतीयों के सामान्य हितों एवं कल्याण विशेषकर भारत से श्रोतों के पलायन के कारण, को हानि पहुंचाई।

3) इसने विरोध प्रदर्शन के निम्न प्रकारों का सर्मथन किया : निष्क्रिय प्रतिरोध, बॉयकॉट, स्वदेशी को अपनाना तथा राष्ट्रीय शिक्षा।

बोध प्रश्न 2

1) गाँधी के चम्पारण आन्दोलन में हिस्सा लेने के फलस्वरूप सरकार ने बागान मालिकों पर किसानों को उनसे गैरकानूनी तरीके से उघाये गये कर का 25% वापस करने के लिए दबाव डाला।

2) इसने रॉलेट ऐक्ट पारित किया क्योंकि इसमें ऐसे प्रावधान थे जिससे भारतीयों को बिना मुकदमा चलाए बंदी बनाया जा सकता था।

3) अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन।

बोध प्रश्न 3

1) गाँधी के अनुसार व्यवसायिक पदसोपान (occupational hierarchy) का विनाश वर्ण व्यवस्था की शुद्धता को पुन: प्राप्त करके किया जा सकता था। दूसरी तरफ अम्बेडकर का मानना था कि अस्पर्शता का मुख्य कारण हिंदू वर्ण व्यवस्था है। इसको वर्णव्यवस्था के विनाश द्वारा ही समाप्त किया जा सकता है।

2) राष्ट्रीय आन्दोलन की सफलता और उसके विजन द्वारा किसानों, मजदूरों एवं जनता को राष्ट्रीय आंदोलन में हिस्सा लेने की प्रेरणा। इससे घबराकर उच्च वर्ग के लोगों ने साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दिया।

बोध प्रश्न 4

1) यह व्यक्तिगत स्तर पर निम्न स्तरीय सत्याग्रह था, जो 17 अक्तूबर, 1940 को शुरू किया गया था। नेताओं ने व्यक्तिगत स्तर पर अंग्रेजी शासन के विरुद्ध भाषण दिए तथा गिरफ्तारियाँ दीं।

2) यह गाँधीजी के नेतृत्व में 8 अगस्त 1942 को शुरू हुआ था। गाँधीजी ने अंग्रेजों को भारत छोड़ने को कहा तथा भारतीयों को स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए "करो या मरो" का आवाहन किया।